ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 268-270

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

वक्रोक्ति एवं रस सिद्धान्त में पारस्परिक सम्बन्ध
(आचार्य कुन्तक के मतानुसार)

सुरेन्द्र कुमार शर्मा
असि0 प्रोफेसर– ए0पी0एम0 पी0 जी0 कालेज, उझानी – बदाँयू (उ0प्र0), भारत

Received- 24.08.2020, Revised- 28.08.2020, Accepted - 03.08.2020 E-mail: - dr.sk.sharma7409@gmail.com

सारांश : ***वक्रोक्ति शब्द का अर्थ :–*** *भारतीय साहित्यशास्त्र के समग्र उपादनों का अनुशीलन एवं समाहार करके आचार्य कुन्तक ने सर्वप्रथम 10वीं शताब्दी में 'वक्रोक्ति' शब्द का प्रादुर्भाव किया। इनके अनुसार–'वक्रोक्ति काव्य जीवितम' अर्थात् वक्रोक्ति ही काव्य का प्राण या जीवन तत्त्व होता हैं।*

'वक्रोक्ति' शब्द 'वक्र' तथा 'उक्ति' दो पदों के संयोग से निष्पन्न है– वक्र+उक्ति=वक्रोक्ति

कुंजीभूत शब्द– समग्र उपादनों, अनुशीलन, समाहार, सर्वप्रथम, वक्रोक्ति, शब्द, प्रादुर्भाव, काव्य जीवितम ।'

वक्र का अर्थ है– टेढ़ा, झुका हुआ, तिरछा, असामान्य, विचित्र, अनोखा आदिं जबकि उक्ति का अर्थ है– कथन, वक्तव्यं। वस्तुतः वक्रोक्ति का शाब्दिक अर्थ है– विचित्र कथन, साधारण कथन से भिन्न विचित्र उक्ति, अलौकिक चमत्कार से युक्त वक्तव्यं।

वक्रोक्ति अलंकार :– साहित्यशास्त्र में 'वक्रोक्ति' एक विशिष्ट शब्दालंकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। जिस वाग्विकल्प में वक्ता के द्वारा प्रयुक्त उक्ति, श्लेष या काकु के बल से दूसरे के द्वारा अन्य अर्थ में संक्रमित कर दी जाये, उसे वक्रोक्ति अलंकार कहते हैं।

अतः वक्रोक्ति अलंकार के दो भेद हुए :–

(अ) श्लेष–वक्रोक्ति (ब) काकु–वक्रोक्ति

(अ) 'श्लेष–वक्रोक्ति' :– श्लेष–वक्रोक्ति में वक्ता के कथन का उत्तरदाता श्लेष के आधार पर अन्य अर्थ लगा लेता है, वहाँ 'श्लेष–वक्रोक्ति' अलंकार होता हैं।

श्लेष–वक्रोक्ति का उदाहरण :– को तुम ? हरि प्यारी। कहाँ बानर को पुर काम ?
श्याम सलोनी ? श्याम कपि क्यों न डरे तब काम।[1]

यहाँ 'हरि' और 'श्याम' दोनो नाम कृष्ण के लिए आये हैं, पर उत्तरदाता द्वारा इनका 'बानर' और 'साँवला' अर्थ लिया गया हैं।

(ब) 'काकु–वक्रोक्ति' :– 'काकु–वक्रोक्ति' में वक्ता के कथन का उत्तरदाता कण्ठ ध्वनि के आधार पर अन्य अर्थ लगा लेता हैं। 'काकु–वक्रोक्ति' अलंकार का उदाहरण निम्नलिखित है–

मैं सुकुमारी नाथ बन जोगू।
तुमहि उचित तप मो कहुँ भोगू।।[2]

उपर्युक्त उदाहरण का वाच्यार्थ यह है कि मैं सुकुमारी हूँ, हे नाथ – आप वन के योग्य हैं, और तुमको तपस्या करना उचित है, और मुझे भोग उचित हैं, परन्तु काकु ध्वनि से इसका अर्थ इस प्रकार होगा – जब आप वन के कठोर दुःखों को सह सकते हैं, तो मैं भी इतनी सुकुमारी नहीं हूँ कि वन की आपदाओं को सहन न कर सकूँ। यदि तुमको तनस्या उचित है, तो मैं भी तपस्या कर सकती हूँ और भोग में पड़ी नही रह सकती।

'काकु–वक्रोक्ति' के इस रूप की उद्भावना सर्वप्रथम आचार्य रूद्रट ने की, इसके पश्चात आचार्य मम्मट, आचार्य रूय्यक और आचार्य विश्वनाथ अदि अलंकारिकों ने वक्रोक्ति के इसी रूप को प्रश्रय प्रदान किया।

वक्रोक्ति एवं रस :– आचार्य कुन्तक वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा स्वीकार करते हैं, लेकिन काव्य में रस के उन्मीलन की आवश्यकता का हमेशा ध्यान रखा है। इन्होंने अपने कव्य–लक्षण में वक्र कवि व्यापार के साथ ही 'तद्विदाह्लादकारिता'[3] को जरूरी माना है। 'तद्विद्' का तात्पर्य है– 'सह्रदय' एवं 'काव्य–मर्मज्ञ'। इस प्रकार 'तद्विदाह्लादकारिणि' पद सह्रदय द्वारा प्राप्त आह्लाद अर्थात् काव्यानन्द अथवा रस की ओर संकेत करता है। 'कव्य–प्रयोजन' में कुन्तक ने रस को काव्यामृत तथा सह्रदय के अन्तःकरण में चतुर्वर्ग रूप में फल के आस्वाद से बढ़कर चमत्कार उत्पन्न करने वाला माना है।[4] इस प्रकार कुन्तक के द्वारा आनन्द को चरम प्रयोजन स्वीकार किया गया है, परन्तु इससे भिन्न कई स्थलों पर कुन्तक ने सह्रदय को 'रसादि–परमार्थज्ञ'[5] एवं 'सरसात्मा'[6] आदि का पर्यायवाची माना है। इस आधार से स्पष्ट होता है कि कुन्तक का आह्लाद–स्तवन रस स्वतन से भिन्न नहीं है अर्थात् कुन्तक के मतानुसार काव्यानन्द ही रस है।

भारतीय काव्यशास्त्र के अन्तर्गत 'ध्वनि–सिद्धान्त' के समान ही आचार्य कुन्तक ने रस को वाच्य न मानकर अवाच्य (व्यंग्य) के रूप में माना है। प्रसंगानुसार इन्होंने उद्भट के सिद्धान्त का भी खण्डन किया है। इन्होंने कहा

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

है– "यदि 'स्व' शब्द से अभिधीयमान पदार्थ श्रुति–पथ में आते ही चेतन व्यक्तियों के चर्वण–चमत्कार को उत्पन्न करते हैं, तो धृतपूर आदि खाद्य पदार्थ 'स्व' शब्द से प्रतिपादित होते ही श्रोताओं का आस्वाद उत्पन्न करने लगेंगे। तब तो समस्त सुखों की उत्पत्ति रम्य वस्तुओं के नाम ग्रहण से ही हो जायेगी।"[7] लेकिन क्या यह सम्भव है? क्योंकि किसी वस्तु के नाम ग्रहण मात्र से वस्तु की पूर्ण अनुभूति प्राप्त नहीं हो सकती, लोकानुभव इसका साक्षात् प्रमाण है। ठीक यही तथ्य रस के विषय में है अतः कुन्तक ने रस को 'स्व' से अवाच्य माना है।

काव्य में रस का महत्त्व :– आचार्य कुन्तक ने अपने रस विषयक मंतव्य को अत्यन्त स्पष्ट एवं उदार रूप में प्रस्तुत किया है। इन्होंने 'वक्रोक्ति–सिद्धान्त' के अन्तर्गत रस के महत्त्व का मार्मिक विवेचन प्रस्तुत किया है। वे काव्य में रस के गौरव से सुपरिचित थे। अतः वे रस की पेशलता पर विशेष बल देते हैं। उनके 'कव्य–भेदों', 'कव्य–वस्तु' एवं 'मार्ग विश्लेषध' में रस की महत्ता का स्वच्छ निरूपण दृष्टिगोचर होता है।

काव्य–भेदों में कुन्तक ने प्रबन्ध काव्य को सर्वश्रेष्ठ माना है। अतः प्रबन्ध वक्रता के सन्दर्भ में उनकी विभ्रान्त मान्यता है कि यह वक्रोक्ति की पराकाष्ठ प्राप्ति है। इनका दृढ़ विश्वास है कि 'निरन्तर रस को प्रवाहित करने वाले सन्दर्भों से परिपूर्ण कवियों की वाणी तथा मात्र के आश्रय से जीवित नहीं रहती है।[8] प्रबन्ध वक्रता और प्रकरण वक्रता के विभिन्न प्रकारों में भी आचार्य कुन्तक रस संचरण को आवश्यक मानते हैं। वे प्रतिपादित करते हैं कि " रसोन्मेष के प्रतिपक्षपाती कवि का मुख्य कर्त्तव्य होता है कि मौलिक कथानक में विद्यमान अंगी रस को सर्वथा त्याग कर उसके स्थान पर सन्दर्भानुसार नवीन रस का उन्मीलन करना।"[9] वैसे भी एक रसता सदैव अरूचिकर होती है। इसी तथ्य को अपने समक्ष रखकर उन्होंने विरसता के दोषों से काव्य को मुक्त रखने के लिए अंगी–रस के अतिरिक्त अन्य रसों के उन्मीलन का भी विधान किया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त उदाहरण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि आचार्य कुन्तक के अनुसार प्रबन्ध–काव्य का प्रधान तत्त्व 'रस' ही है। आचार्य कुन्तक ने 'कव्य–वस्तु' का साक्षात् सम्बन्ध रस से माना है। उनके अनुसार 'कव्य–वस्तु' के दो प्रकार होते हैं– चेतन और अचेतन। चेतन वस्तु (देवता, असुर और या मानव) मुख्य है, अचेतन गौण। चेतन वस्तु उस दिशा में अत्यन्त रमणीय और चमत्कारी होती है जब वह कमनीय रूप के परिपोष से मनोहर होती है।"[10] अचेतन वस्तु (लता, नदी, पर्वत आदि) का विवेचन भी काव्य का अंग है। लेकिन आचार्य कुन्तक ने अचेतन वस्तु का काव्यत्व रसोद्दीपन–क्षमता के कारण ही माना है।"[11] अतः स्वतः सिद्ध है, कि आचार्य कुन्तक 'काव्य–वस्तु' में रसजन्य चमत्कारी के उपासक है।

आचार्य कुन्तक ने मार्ग विवेचन में भी रस की महत्ता का उल्लेख किया है। सुकुमार मार्ग के रसादि के रहस्य को समझने वाले सहृदयों के मन के अनुरूप होने के कारण सुन्दर होता है।"[12] विचित्र मार्ग को कुन्तक ने 'सरसाकूत' एवं 'रसनिर्भराभिप्रया' कहा है।"[13] मध्यम मार्ग में दोनों गुणों का मिश्रण होता है, अतः वह स्वतः ही रससिक्त होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आचार्य कुन्तक ने काव्य में रस–चमत्कार का विविध प्रकार से अन्तर्भाव किया है। उनके सिद्धान्त में रस एक अनिवार्य 'कव्य–तत्त्व' के रूप में गृहीत हुआ है। आचार्य कुन्तक का मत प्राचीन अलंकारिकों से भिन्न रहा है। प्राचीन अलंकारिकों ने रस को रसवत् अलंकार के रूप में स्वीकार किया है, लेकिन कुन्तक ने रसवत् अलंकार का खण्डन करते हुए, रस की अलंकार्यता का प्रतिपादन किया है।

वे लिखते हैं– "(रसादि की प्रतीति के स्थल में रस के) अपने स्वरूप के अतिरिक्त (अलंकार्य रूप से) अन्य किसी की प्रतीति न होने से और (रस के साथ अलंकार शब्द का प्रयोग करने पर) शब्द और अर्थ की संगति भी न होने से 'रसवत्' अलंकार नहीं हो सकता।"[14] तात्पर्य सही है कि रसवत् अलंकार नहीं है, क्योंकि रसवत् नाम से कल्पित जो अलंकार है, उसका अलंकारत्व ही सिद्ध नहीं होता।

आचार्य कुन्तक का रस के प्रति इतना प्रबल आग्रह है कि रसवत् अलंकार को सब अलंकारों का जीवित मानने में ही उनका विश्वास है, तथा वे उसे काव्य का सर्वस्व अंगीकार भी करते हैं।[15] इस प्रकार कुन्तक ने रस के परम्परागत (रसवत्) रूप का निषेध करते हुए, उसे काव्य को 'अद्वितीय सार सर्वस्व' माना है। एक प्रकार से कुन्तक ने रस के प्रति अपनी सहृदयता ही प्रदर्शित की है।

वक्रोक्ति एवं रस का पारस्परिक सम्बन्ध :– आचार्य कुन्तक एक ओर वक्रोक्ति को काव्य का 'जीवन–तत्त्व' कहते है, और दूसरी ओर रस को काव्य का 'परम–तत्त्व' ऐसी परिस्थिति में प्रश्न यह उठता है कि वक्रोक्ति और रस का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है? ध्यातव्य यह तथ्य है कि आचार्य कुन्तक काव्य में रस के महत्त्व को अस्वीकार नहीं करते है, परन्तु साथ ही वे रस को काव्य का 'जीवन–तत्त्व' के रूप में भी स्वीकार नहीं करते। इसीलिए उन्होंने रस को अपनी काव्य पद्धति में स्वतन्त्र स्थान न देकर वक्रोक्ति में अन्तर्भूत अपादेय तत्त्व माना है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

अतः कारण स्पष्ट है कि आचार्य कुन्तक के अनुसार काव्य, शब्द–अर्थ की अनेक विभूतियों का उपयोग करता है, – अर्थ में विभूतियों में सबसे अधिक मूल्यवान है– रस। अतएवं रस वक्रोक्ति–रूपिणी 'काव्य–कला' का 'परम तत्त्व' है, काव्य की प्राण चेतना है, तथा वक्रता और वक्रता की समृद्धि का प्रमुख आधार है।''[18]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि आचार्य कुन्तक रस को काव्य का एक उत्तम तत्त्व स्वीकार करते है, परन्तु वे काव्य का 'प्राण–तत्त्व' वक्रोक्ति को ही मानते हैं। वस्तुतः आचार्य कुन्तक काव्य में रस की महत्ता को स्वीकार करते हैं, परन्तु उसे काव्य की आत्मा मानने को तैयार नहीं, उन्होंने रस को स्वतन्त्र स्थान न देकर वक्रोक्ति के अन्दर ही एक उपयोगी तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि उनके अनुसार वक्रोक्ति ही काव्य होता है, और इस काव्य के लिए कवि अनेक प्रकार के शब्द–अर्थ एवं अलंकार आदि का उपयोग करता हैं, और इस प्रकार रस काव्य की आत्मा रूपी वक्रोक्ति का उपकारक रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार आचार्य कुन्तक ने रस को वक्रोक्ति का उपकारक तत्त्व मानकर उसका महत्व स्वीकार किया है, परन्तु रस की उपादेयता को स्वीकार करते हुए वे उसे काव्य का 'प्राण–तत्त्व' न मानकर अंग ही मानते हैं, और वक्रोक्ति को अंगी। इस प्रकार उनकी दृष्टि में वक्रता के बिना रस की स्थिति सम्भव नहीं है, जबकि रस के बिना वक्रता अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रखने में स्वतन्त्र है। यह भी सच है कि आचार्य कुन्तक रस––विहीन वक्रता को श्रेष्ठ नहीं मानते, तथापि वे महत्त्व, वक्रता को ही अधिक देते हैं, और उनके अनुसार वक्रोक्ति ही काव्य का जीवन है और रस काव्य की बहुमूल्य सम्पत्ति होकर भी उसका 'प्राण–तत्त्व' नहीं है, और वह आचार्य कुन्तक की दृष्टि में वक्रोक्ति से निम्न कोटि का ही सिद्ध होता है। निष्कर्षतः वक्रोति और रस का यही सम्बन्ध है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ शोभादेश पांडे : हिन्दी भाषा तथा साहित्य शास्त्र, पृष्ठ 196
2. डॉ शोभादेश पांडे : हिन्दी भाषा तथा साहित्य शास्त्र, पृष्ठ 196–197
3. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 1 ।। 7 ।।
4. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 1 ।। 5 ।।
5. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 1 ।। 26 ।।
6. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 1 ।। 56 ।।
7. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 11 ।। कारिका की वृत्ति पृष्ठ 344
8. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 4 ।। 4 ।। का अन्तः श्लोक, पृष्ठ 495
9. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 4 ।। 16 ।।
10. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 7 ।।
11. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 8 ।।
12. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 26 ।।
13. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 41 ।।
14. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 11 ।।
15. आचार्य कुन्तक : हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् 3 ।। 14 ।।
16. डॉ नगेन्द्र : भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, पृष्ठ 293

*****